RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-01
January -2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

मौर्योत्तर कालीन भारतीय स्थापत्य कला का स्वरूप

सुरजीत कुमार सिंह

शोधार्थी प्राचीन भारतीय इतिहास पुरातत्त्व एवं संस्कृति विभाग ल० ना० मिथिला विश्वविद्यालय,कामेश्वरनगर, दरभंगा–846004

प्राचीन भारतीय कला का दूसरा सबसे बड़ा रूप मुर्तिकला की शुरूआत भी मीर्योत्तरकाल से होता हुआ पाया गया है।मौर्योत्तर काल के प्राचीन भारतीय वास्तुकला में पवित्र वस्तुओं केनिर्माण का सिलसिला बौद्ध और जैनियों ने शुरू किया था, वह श्रैः–श्रेः वैष्णव और शैव देवीदेवताओं के मंदिर निर्माण में विकसित होता रहा। यही मौर्योत्तर काल भारतीय स्थापत्य कला केक्षेत्र में उस नींव की शुरूआत किया मानी जाती है।जिसकी प्रेरणा से भारत में एक से एक भव्यविशाल और आश्चर्यजनक वास्तुओं में स्थापत्य कला प्रकट होती चली गई। यद्धपि मूर्ति कला कीशुरूआत हड़प्पा की सभ्यता से ई0 पू0 2500 वर्ष लगभग से ज्ञात हुआ है। किन्तु आर्यों केआगमन और प्रसार में खासकर देवमूर्तियाँ बनाने पर प्रतिबंध लगा रहा। चूँकि वैदिक आर्यमूर्तिपुजक नहीं रहे थे। इसलिए उनके समय मूर्ति निर्माण शुरू नहीं हुआ था। वे अग्नि में हवी(देवता को भोजन) स्वाहा कर, देवता को प्रसन्न करने के लिए इस कर्मकाण्ड विधि मे विश्वास करतेथे।***1 यह परंपरा मौर्यों के समय तक चलती रही कि मूर्ति की जगह प्रतीकों का निर्माण होतारहा। अशोक के स्तंभ पर किसी तरह की मनुष्य मूर्ति नहीं मिलत है। त्रिमूर्ति में सिंह, सांढ़ और मँयूरकी मूर्तियाँ प्रतीकात्मक रहे थे। इसी तरह बुद्ध और महावीर जैन के जीवन से संबधित घटनाओं कीप्रतीक पूजा ही होती थी। इसलिए इस आलोच्य काल के हीनयानी स्तूप पर बुद्ध से संबंधित प्रतीकोंकी मूर्तियाँ मिलती हैं। किंतु ई0 पू0 दूसरी शताब्दी से हिन्द यूनानियों ने पश्चिमोत्तर भारत मेंआधिपत्य कायम हुआ था। तब वे लोग यूनानी परंपरा में अपना मंदिर, इमारत, और मूर्तियाँ बनानेलगे थे।***2 इसी से पश्चिममोत्तर भारत का क्षेत्र जो प्राचीन काल में गांधार प्रदेश के नाम से जानाजाता था, जिसमें भूरे रंग के पत्थर से मूर्ति निर्माण की एक शैली तथा उसके कला केन्द्र कीशुरूआत हुई। यह कला केन्द्र यूनानी महापुरूषों की मूर्ति के अनुरूप भारतीय देवी–देवताओं कीमूर्तियाँ बनाने लगी थी। इसके कई केन्द्रों की जानकारी भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण की खोज से प्राप्तहुई है। यह कला केन्द्र में सबसे अधिक बौद्ध मूर्तियों का निर्माण हुआ था। इसके साथ ही विविधतरह के गैर धार्मिक मूर्ति समूह आदि शिला पट्टों पर खोज कर उत्कीर्ण किए गए थे। यह कला शैलीविदेशी प्रेरणा से उत्पन्न होकर भारतीयता के रूप रंग में विकसित हुई थी। इस तरह मूर्तिकला काभारतीय रूप गांधार कला शैली से शुरू हुई।

गांधार क्षेत्र में तो पहले से भी पश्चिम और मध्य एशिया के लोग आकर फैले हुए थे,किंतु ये लोग भी मूर्ति पूजक नहीं होते थे। मूर्ति पूजक बैक्ट्रिया के ग्रीक ईरानी और मध्य एशियातथा चीन से आने वाले लोग रहे थे। अतः ये लोग अपने देवी–देवता की मूर्ति बनवाकर पूजा करतेथे।***3 उस क्षेत्र में फैला हुआ बौद्ध धर्म और उसके कई संघाराम थे। अतः बाहर से आये हुएलोगों को बौद्ध धर्म में धर्मातरण के लिए, बौद्ध दर्शन गंभीर और अपच रहा था। चूंकि उस समयतक बौद्ध धर्म पर अनिश्वरवाद हावी रहा था। हीनयानी संप्रदाय बुद्ध के प्रतीक पूजा करते थे। अतःउसमें बुद्ध के जीवन दर्शन और उपदेशों को उनके प्रतीकों से जाना जाता था। उन प्रतीकों केधार्मिक महत्व को बाहर से आए हुए लोगों को सहज ग्राह्य नहीं था। इसलिए बौद्ध संघाराम बाहरीलोगों को बौद्ध धर्म में धर्मातरण के लिए, बौद्ध मुर्ति कला का सहारा लेना आवश्यक हो गया। अतः गांधार क्षेत्र में जहाँ बौद्ध धर्म व्यापक रूप मे फैला हुआ था, के बीच बाहरी लोगों को मिलाने केलिए मूर्ति का सहारा लेना आवश्यक हो गया था।***4

दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व में बौद्ध प्रतिमा विज्ञान का आविष्कार नहीं हुआ था। बुद्धकी मूर्ति को किस रूप में प्रदर्शित किया जाय । मूर्ति पर देवता के बिना नाम लिखे शारीरिक लक्षणवाहन हाथ में अस्त्र–शस्त्र के प्रदर्शन से देवता की पहचान किया जाना बाद में विकसित हुआ।वात्स्यायन के कामसूत्र, जिसमें महापुरुष, सन्यासी, राजा, महाराजा तथा अन्य देव शक्ति के लक्षणस्थापित नहीं हुए थे। फिर गांधार क्षेत्र में कलाकार मूर्ति निर्माण में सिद्धस्थ भी नहीं हुए थे, इसलिएबाहर से आए लोगों के देवी–देवता के अनुकरण कर भारतीय देवी–देवता की मूर्ति निर्माण कीशुरूआत किये। इसलिए गांधार क्षेत्र में बाहर से आए लोगों की मूर्तियाँ ही नहीं, भारतीय देवी–देवताकी मूर्तियाँ तथा भारतीय विषय वस्तु के शिलापट्ट फलक चित्र भी बनाए जाने लगे।***5

चूँकि गांधार प्रदेश में खासकर अशोक के समय बौद्ध धर्म का काफी प्रचार हुआथा। शाहबाजगढ़ी (पेशावर) से अशोक के त्रिलिपीय अभिलेख खुदे मिले हैं। अतः गांधार क्षेत्र केबौद्ध ने बुद्ध की मूर्तियों का निर्माण करवाना शुरू किया। बुद्ध मूर्ति के पहले युनानी देवी–देवता,महापुरूष योद्धा राजा और नर–नारियों की मूर्ति यूनानी कलाकार बनाया करते थे। अतः भारतीयकलाकारों ने भारतीय देवी–देवता की मूर्ति उसी के अनुकरण पर बनाना शुरू किये। इसलिए बुद्धकी मूर्ति चाहे खड़ी हो, बैठी हो या सोयी हुई हो, यूनानी संत के अनुरूप बनाया जाने लगा था।इसलिए बुद्ध की प्रारंभ की गांधार मूर्तियों में से के मुख पर मूंछ, लंबा चोंगानुमा वस्त्र और महापुरुषके भारतीय लक्षण विहीन मूर्तियाँ बनायी गयी थी। ऐसी मूर्तियाँ स्कारादेवी, शहरी वहलोल,पुष्कलावती आदि स्थलों से ज्ञात हुआ है।

गांधार कला की प्रारंभिक मूर्तियों का चेहरा–मोहरा वस्त्र आभुषण भी विदेशी की तरहहै। चूँकि गांधार कलाकार भारतीय नस्ल की नृतात्विक आकृति की पहचान से परिचित नहीं थे।इसलिए युनानियों की तरह गोल चेहरा, जटा मुकुट की जगह लंबे केश, युनानी आभूषण आदिदिखलाया गया था।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

वहीं कुषाण का यानी पहली दूसरी सदी में वात्स्यायन के कामसूत्र में मनुष्य को तीन श्रेणियों में विभाजन किया गया है। उच्च, मध्यम और नीच और उसके लक्षण स्थापित होने सेगांधार के शिल्पकार उसे अपनाने लगे।***6 फलतः युद्ध की मूर्तियों में भारतीय महापुरूष केलक्षण जैसे कि मुंछ विहीनता, माथे पर उर्ना (टिका) घुघराले छोटे बाल, लंबी भाँ, कान और नाक,अजानवाहु तथा हा पैर की तलहटी पर चक्र जैसे महापुरूष के लक्षण दिखलाए जाने लगे। यहगांधार कला का विदेशी प्रभाव से भारतीयकरण होना शुरू हुआ। अतः गांधार कला शैली काविकास के दो चरण में रहे थे। प्रथम चरण दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व से प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व औरदूसरा ईसवी सन् की प्रथमशताब्दी से दूसरी शताब्दी के बीच के काल की मूर्तियाँ।

गांधार क्षेत्र में आए यूनानी हो या शक सीथियन अथवा कुषाण आदि के बीच नारी कास्थान गौण रहा था। चूंकि उनके बीच योद्धाओं का वर्चस्व बढ़ गया था और सत्ता प्रसार के लिएअपने सहयोगी योद्धाओं को भी शासन सत्ता में भी भागीदारी देने लगे थे। इससे भारत में भी उसीतरह से शासन सत्ता की शुरूआत कर सामंती समाज का श्री गणेश करने लगे थे। सामंती समाज मेंनारी को संभोग की वस्तु, बच्या प्रजनन का मशीन और पति की सेविका वाला स्थान दिया गया था।इसी की अभिव्यक्ति पानशाला में, मद्यगृह में, राजदरवार में, नृत्यशालाओं में नारियाँ को नग्न रूप मेंप्रदर्शन किया जाता था। इसी को गांधार के कलाकारों ने अपनाया था। अतः गांधार कला से समाजकी वस्तु स्थिति का अभिव्यक्तिकरण मूर्तिकला में भी देखने को मिलता है।***7 जिसे बाद मेंभारतीय कलाकारों ने पतले परिधान के द्वारा शालीनतापूर्ण ढंग से प्रदर्शन करना शुरू किया था।

गांधार क्षेत्र मौर्यो, के पतन के बाद और पांचवी सदी के महान गुप्त राजा चन्द्रगुप्तद्वितीय के उदय के पूर्व यह क्षेत्र विदेशी आधिपत्य और संस्कृति का गढ़ रहा था और इस कालावधिमें चीन मध्य एशिया और पश्चिम एशिया से लोगों के आने का तांता लगा रहा। अतः उनलोगों के भीदेवी–देवता के विशिष्ट गुण और लक्षण भारतीय देवी–देवता के मूर्तियों में दिखलाया जाने लगा।ताकि वे विदेशी अपने देवता के गुण और लक्षण को भारतीय देवी–देवता में मौजूद पाकर उसे ग्रहणकरें। इसलिए मिश्र का 'रा' और ईरान का मिहिर भारत में सूर्य का प्रार्यावाची नाम बनने लगा।

अतः गांधार कला के उद्गम का मूल स्त्रोत भारतीय संस्कृति में वाह्म तत्व के समागम सेहोना शुरू हुआ था। इसलिए शिव की मूर्ति में त्रिशुल, बैक्ट्रियन ग्रीक के योद्धा का औजार और शिवके भाल पर चंद्रमा का प्रदर्शन चीन के देवता माओ (चन्द्रमा) का लक्षण शामिल किया जाने लगा। फलतः गांधार कला शैली से ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी के पहले भारतीय देवता का जो स्वरूप था, वहबदलना शुरू हो गया। यानी गांधार क्षेत्र में जो एक मिश्रित संस्कृति फैल रही थी। उसी कीअभिव्यक्ति के लिए गांधार कलाशैली का उद्भव हुआ था।

गंधार कला शैली के उद्धव का एक बड़ा कारण जन्म ले रहे योद्धावदी सामंतीसमाज का उद्धव भी रहा था। इस समाज में योद्धा का महत्व था इसलिए भारतीय देवता को भीयोद्धा रूप दिया गया। सप्तरथी सूर्य कमर में कटार लटका हुआ, शिव के हाथ में त्रिशुल देवता कोभी योद्धा रूप में प्रस्तुत करना रहा था। इसी की पूर्ति हेतु गांधार कला शैली को उद्भूत किया गया था।***8 फिर सामंती समाज में नारियों के गौण रूप का प्रदर्शन भी गांधार कला में होना उसकेउद्भव का कारण रहा था।

इस तरह गांधार कला शैली को मूलतः भारतीय समाज में विदेशियों केसमागम से उत्पन्न एक साझी संस्कृति को दिखलाना रहा था। अतः सर्वसाधारण के बीच शासकदल अपनी सत्ता को लादने के लिए सर्वसाधारण के बीच अपनी छवि, विचारधारा और मान्यता कोप्रदर्शित करने के लिए गांधार मूर्ति कला शैली का सहारा लिए थे। गांधार क्षेत्र में कोई एक कलाकेन्द्र नहीं रहा था बल्कि उसके जितने नगर रहे थे, प्रत्येक नगर मे नए समाज की अभिव्यक्ति कोप्रदर्शित करने के लिए कला केन्द्र खोले गए थे। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण ने ऐसे आधा दर्जन सेउपर गांधार कला शैली के केन्द्रों की खोज किए हैं। जिसमें तक्षशिला पुष्कलावती, शाहवाजगढ़ी,स्काराढ़ेरी, शहरी बहलोल, कपिषा नगरद्वार, कई कला केन्द्र विकसित थे। जिनमे कलाकार भलेअलग–अलग थे, लेकिन कलाशैली में एकरूपता पाया जाता है यही गांधार मूर्ति कला शैली कीविशेषता रही थी और उसके उद्भव का मुख्य उद्देश्य रहा।

मौर्योत्तर काल में भारतीय कला और स्थापत्य कला की अध्ययन से भारतीयसमाज और संस्कृति के विकास के किस स्वरूप का उद्बोधन होता है। चूंकि इसी काल के अंत होते–होते भारत में सामंती समाज का स्वरुप निखरने लगता है। अतः यह भी खोजना है कि मौर्योत्तरकला और स्थापत्य कला के उदय का भारतीय सामंतवाद से क्या संबंध रहा था।

मौर्योत्तर काल दूसरी शताब्दी ई० पू० से दूसरी शताब्दी ई0 सन् का काल माना जाताहै। इस काल में मौर्यों के पतन सेविकेन्द्रीकरण का युग शुरू हो गया था। जिसके कारण भारत मेंकोई बड़ा राज्य नहीं बन पाया, मात्रमगध सम्राज्य बिहार, यूपी और मध्य प्रदेश पर कायम रहा। शेषपश्चिमोत्तर भारत पर बैक्ट्रियन ग्रीक शिथियन, पार्थियन और कुषाणों का क्रमशः आक्रमण औरआधिपत्य होता रहा। दक्षिण भारत सातवाहनशासकों के अधीन तो पूर्वी भारत कलिंग के राजाखारवेल के अधीन उठ खड़ा हुआ, यह भारतीय सामंत प्रथा का प्रथम लझण रहा था।

इस तरह मौर्योत्तर काल में विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया तीव्र होगई थी।फिर भीमौर्योत्तर काल में जो आर्थिक सामाजिक गतिविधियाँ देखने को मिलती है उसकीपृष्ठ भूमि मौर्य कालमें शुरू हो गई थी। आर्थिकविकास के परिणामस्वरूप कृषि, उद्योग इत्यादि काफीबढ़ गए थे। किन्तुमौर्यों के पतन के बाद जो सीता गाँव थे, उसके जो अधिकारी देख–रेख कर रहेथे, वे लोग इन गाँवकी भूमि का मालिक बन कर बड़े भू–स्वामी बनने लगे थे। अतः ऐसे गाँव केकिसान रैयत किसान मेंपरिणत कर दिये जाने से उनकी माली हालत बिल्कुल खराब हो गई थी। यह भारतीय सामंतवाद कादूसरा लक्षण रहा, जो मौर्योत्तर काल में विकसित हुआ था।

इसी परिपेक्ष में जो सामाजिक विकास मौर्यों के समय में हुआ था. उसमें भी मौर्योत्तरकाल में परिवर्तन होने लगा था। फ्लतः मौर्य काल में जाति प्रथाका विकास होना शुरू हो गया था।

मेगास्थनीज से ज्ञात होता है कि सात जातियों फैल चूंकि थी। मौर्योत्तर काल में उससे भी संख्याबढ़ती चली गई। मिलिन्दपन्हो से ज्ञात होता है कि इस काल में लगभग 2

दर्जन से उपर पेशेयरजातियों का उदय हो गया था। पहले पैश्य जाति पेशा से संबंधित नही था, लेकिन इस काल में उनतमाम पेशेवरों को जाति में बाँध दिया गया था। चूंकि ब्राह्मण पूणरुत्थान होने के चलते जिस भीजाति के लोग जिस किसी पेशा से जुड़े थे वही उनकी जाति हो गई थी। अतः रूढ़िवादी विचार फिरइस काल में पूर्णस्थापित होने लगा।

इसका परिणाम हुआ कि ब्राह्मण पुनरुत्थान के चलते इस आलोच्य काल में फिर सेब्राह्णवादी विचारधारा, ब्राह्मणवादी समाज और ब्राह्मणवादी नियम कानून आदि लागू होने लगे थे।परिणाम यह निकला की भारतीय समाज और भी बिखरना शुरू हो गया। इस परिस्थिति मेंविदेशियों का आक्रमण और उनलोगों का बड़ी संख्या में पश्चिमोत्तर और पश्चिम भारत में बसने सेसामाजिक बनावट में फिर से बदलाव शुरू हो गया। चाहे ब्राहाण हों या, बौद्ध हों या जैन सबों ने इनलोगों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए अपने–अपने समाज, धर्म में ढील देना शुरू किया।इस ढ़ील के परिणामस्वरूप कुछ विदेशी आक्रमणकारी बौद्ध में, तो कुछ ब्राह्मण धर्म में तो कुछशैव धर्म को स्वीकारकरने लगे। फलतः इस काल में भारतीय समाज में कई तरह की जातियाँ उनकेरस्मो–रिवाज औरउनके जीवन पद्धतियों चलने लगी थी। इस तरह इस काल में भारतीय समाज औरभी बिखरने लगा था। बाह्य आक्रमणकारियों के आने से विदेशी तत्त्वों का भारतीय समाज मेंसमागम तेजी से होने लगा। यही बात इस काल के कला पर देखने को मिलता है।

चाहे ब्राह्मण मूर्ति हो या बौद्ध मूर्ति हो, सब पर विदेशी प्रभाव देखने को मिलता है।ऐसे अनेक मूर्तियाँ पश्चिमोत्तर भारत में उत्खनन से प्राप्त हुए हैं जिनके देखने से स्पष्ट परिलक्षितहोता है कि पुराने भारतीय धर्म और उसकी मूर्तियाँ बदल चूँकि थी। उदाहरण के तौर पर सूर्य जोवैदिक काल में एकरथी थे। मौर्योत्तर काल में आकर सप्तरथी हो गये। सूर्य को इस काल में रवि कहाजाने लगा, जो प्राचीन मिश्र में रा'' के नाम से पुकारे जाते थे। यानि मिश्र की जो सूर्य के संबंध मेंविश्वास था। यह भारत में भी प्रचारित होने लगा।

इसी तरह ईरान में मिहिर के नाम से सूर्य की पूजा होती थी।भारत में उसी नाम से सूर्यप्रख्यात होने लगे। ईरान से आकर सूर्य योद्धा, देवता बन गये। उनके कमर में कटार दिखलाया जानेलगा और वही रूप इस आलोच्य काल में सूर्य देवता के प्रतिमाओं में देखा जाता है कि उनके कमरमें भी कटार लटका हुआ है। इसी तरह शिव जो पशुपति कहे जाते थे उनके हाथ में त्रिशुल, माथै परचन्द्रमा और गले में सर्प की माला लटका दिया गया था। अतरू ये सारे तत्त्व विदेशी तत्व थे, जोभारतीय मूर्तियों में देखने को मिलते हैं। अतः इस काल के भारतीय समाज और संस्कृति पर विदेशीआक्रणकारियों और उनको भारतीय समाज में मिलने से भारतीय समाज, अर्थव्यवस्था, धर्म सबों मेंपरिवर्तन आना शुरू हुआ। इस काल स्थापत्य कला और मूर्तिकला में जो परिवर्तन आया। वह एकनये युग की शुरूआत की द्योतक थी।

अतः यह मानना उचित होगा कि मौर्योत्तर काल भारतीय इतिहास का वहपरिवर्तनकारी काल रहा था। जिस काल में मध्यकालीन भारतीय समाज का जो रूप निखरा उसकामूल इसी युग में उभरने लगा था। अतरू कि इस काल की जो कलाएं है, चाहे स्थापत्यकला हो यामूर्तिकला उसी से इस सांस्कृतिक विकास को उजागर किया जा सकता है। अतः प्राचीन संस्कृतसाहित्यों में जिसे अंधकार युग कहा गया था। वह सचमुच के अर्थों में अंधकार युग नहीं था, बल्किभारतीय समाज का परिवर्तनकारी युग रहा। जिसकी अभिव्यक्ति मूर्तिकला और वास्तुकला में है।

संदर्भ ग्रथें और टिप्पणियां

1. आर0 सी0 मजूमदार(संपादकीय) द हिस्ट्री एंड कल्चर ऑफ इंडियन पीपल प्रथम खंड 1952–पृष्ठ–संख्या–202–03.
2. वी0 डी0 स्पूनर,– द एशियन कल्चर–लंदन–1919–पृष्ठ–संख्या–136–38.
3. राहुल संस्कृत्यायन– मध्य एशिया का इतिहास–पटना–1949–पृष्ठ–संख्या–115–16.
4. रोलिंगसन–बुद्धिज्म इन इंडिया–लंदन–1954–पृष्ठ–संख्या–123–24.
5. भगवत शरण अग्रवाल–भारतीय कला–वाराणसी–1966–पृष्ठ–संख्या–288–89.
6. वात्सायन का कामसूत्र अनु0 हिंदी चौखंभा संस्कृत सीरीज वाराणसी–1972 पृष्ठ–संख्या–137–38.
7. आर0 के0 मुखर्जी–सोशल फंक्शन आफ आर्ट–कोलकाता–1948–पृष्ठ संख्या 62–63.
8. निहार रंजन राय–मोर्या एंड सुंगा आर्ट–कोलकाता–1945–पृष्ठ–संख्या–77–78.

RRIJM 2015, All Rights Reserved